जनखत की तोरण-शालभंजिका

—डा० अशर्फीलाल श्रीवास्तव

चार-पाँच वर्ष पहले मुझे एक बार कन्नौज जाने और वहाँ के पुरातात्विक संग्रहालय में संग्रहीत कन्नौज क्षेत्र की पुरा-सम्पदा देखने का सुयोग मिला। संग्रहालय के छोटे से भवन में स्थानीय पुरातत्व एवं कला के विशाल भण्डार को देखकर में अभिभूत हो गया। वस्तुकला मूर्तिकला, मृण्मूर्तिकला, मृदभाण्ड कला तथा मुद्राकला के विविध नमूने कन्नौज-संग्रहालय की शोभा बढ़ा रहे थे। मुझे सबसे अधिक आकर्षित किया जनखत ग्राम से प्राप्त एक तोरण-शालभंजिका ने जो प्राचीन भारतीय मूर्तिकला की एक मनोहारी छवि प्रस्तुत करती है। आगे-पीछे दोनों ओर से उत्कीर्ण यह शालभंजिका एक स्तम्भ से जुड़ी है और किसी तोरण द्वार के बाँए पार्श्व का खण्डित भाग प्रस्तुत करती है। जनखत में ही तोरण द्वार का दायाँ खण्डित भाग भी पाया गया है, किन्तु इसकी शालभंजिका टूट चुकी है। इसमें नीचे केवल मकर-मुख और खड़ी शालभंजिका के पैर ही अवशिष्ट रह गए हैं। दोनों स्तम्भों पर बीच में सिंह-स्तम्भ तथा अगल-बगल पत्रलताओं के समान और सुगढ़ अंकन हैं।

जनखत की यह तोरण-शालभंजिका शालवृक्ष के नीचे एक मकरमुख के ऊपर त्रिभंग मुद्रा में खड़ी है। इसने अपने दांये उठे हुए हाथ से पुष्पित डाल पकड़ रक्खी है और उसका बाँया हाथ कट्यवलम्बित मुद्रा में है। मांसल गात, भारी नितंव और गोल पयोधरों वाली यह शालभंजिका अपनी सुन्दर वेशभूषा से और भी अधिक आकर्षक हो उठी है। कानों में भारी कर्णाभरण गले में एकावली, वक्ष पर हार, कलाई में कंगन, भुजाओं पर सपत्र केयूर, कटि पर मेखला और पैरों में झांझर पहनने वाली इस शालभंजिका ने अपनी शिरोभूषा में रिबन से एक पफ बाँध रक्खा है। कमर से लहराता कटिवस्त्र तथा नाभि के नीचे लटकते नीवीवन्ध के दोनों छोर शालभंजिका को शालीनता प्रदान करते हैं। (चित्र सं० 1)

शालभंजिका के इस शिल्प में वाहन के रूप में मकर का अंकन कलाकार की मात्र कल्पना नहीं अपितु सार्थक प्रतीकात्मकता का बोध करता है। मकर जल-जीवन का और शालभंजिका वनस्पति-जीवन की प्रतीक है। प्रस्तुत शिल्प में

Janak Seva Jankhat Kannauj-209736
Office

दोनों के बीच सुन्दर समन्वय स्थापित किया गया है। मकर कामदेव का भी प्रतीक है। तरुणी के संसर्ग में काम-प्रतीक मकर का अंकन नितांत स्वाभाविक जान पड़ता है।

शालभंजिका भारतीय साहित्य और कला का एक अनुपम प्रतीक है। पहले यह पूर्वी भारत की नारियों की एक उद्यानक्रीड़ा थी जिसका उल्लेख पाणिन ने अपनी अष्टाध्यायी के 'प्राचां क्रीड़ायाम्' सूत्र में किया है।[1] आवदान शतक और निदानकथा जातक में शालभंजिका महोत्सव तथा शालभंजिका क्रीड़ा का मनोहर वर्णन पाया गया है।[2] आगे चलकर इसमें भारतीय साहित्य के एक अन्य प्रतीक दोइद का भाव भी सम्मलित हो गया। दोइद एक कवि-विश्वास था जिसमें तरुणी के पाद-प्रहार से अथवा आलिंगन से असमय में ही वृक्ष के पुष्पित हो जाने की बात स्वीकार की गई थी—तरुगुल्मलतादीनां अकाले कुशलैः कृतम्। पुष्पात् उत्पादकं द्रव्यं दोइद स्यात्तु तत्क्रिया (शब्दार्णव)। दोइद के उल्लेख भारतीय साहित्य में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। महाकवि कालिदास ने भी रघुवंश, मेघदूत तथा मालविकाग्निमित्र में दोइद का विविध वर्णन किया है।[3]

कालान्तर में भारतीय शिल्पकारों ने भाँति-भाँति से शालभंजिका-दोइद समान्वित स्वरूप को अंकित किया। प्रायः वृक्ष के नीचे खड़ी अथवा उसका आलिंगन करती और एक हाथ से वृक्ष की डाल पकड़े अथवा फूल या फल तोड़ती हुई मोहक नारी-मूर्ति का अंकन शालभंजिका के रूप में लोकप्रिय हो गया। ऐसी शालभंजिकाएँ भरहुत, साँची, कुमराहार (पटना), मैहरौली, कौशाम्बी, मथुरा एरण, अमरावती, नागार्जुनकोण्ड, भुवनेश्वर, काठमाण्डू (नेपाल) आदि स्थानों के मूर्ति शिल्प में उत्कीर्ण पाई गई हैं। गांधरकला में भी शालभंजिका प्रतीक उत्कीर्ण किया गया था। इसी प्रकार मृण्मूर्तिकला में शालभंजिका प्रतीक के उदाहरण महाराष्ट्र के नेवासा तथा उत्तर प्रदेश के कोपा (जिला वस्ती) नामक स्थान से प्राप्त हुए हैं।[4]

---

[1] अष्टाध्यायी, ६-२-७४; वासुदेवशरण अग्रवाल, **इण्डिया ऐज़ नोन टु पाणिनि**, वाराणसी, १९६३, पृ० १५९-६०।

[2] वासुदेवशरण अग्रवाल, **उपरोक्त**, पृ० १६०।

[3] दोइद प्रतीक तथा सन्दर्भों के लिए लेखक का निबन्ध देखें 'दोइद : भारतीय एक लोकप्रिय प्रतीक', **प्राच्य प्रतिभा**, वाल्यूम ५, सं० १, पृ० १७०-७६।

[4] इन सभी सन्दर्भों के लिए देखें लेखक का निबन्ध 'ए ब्रैकेट शालभंजिका फ्रॉम जनखत नियर कन्नौज', **जर्नल ऑव द इण्डियन सोसाइटी ऑव औरियण्टल आर्ट**, ७५ वर्षीय विशेषांक, वाल्यूम १२-१३, पृ० ५९-६५।

Janak Seva Ashram Jankhat Kannauj-209736 ★ Office

तकनीकी दृष्टि से उपरोक्त शालभंजिकाएँ प्रायः दो कोटियों में आती हैं— स्तम्भ शालभंजिकाएँ तथा तोरण-शालभंजिकाएँ। तोरण-शालभंजिकाएँ भी दो प्रकार की उकेरी गई थीं। साँची तथा एरण की शालभंजिकाएँ स्वतन्त्र नारी-मूर्तियाँ हैं जिन्हें चारों ओर से तराशा गया था, परन्तु मथुरा में कंकालीटीले तथा सोंख से प्राप्त शालभंजिकाएँ एक चौकोर प्रस्तर-खण्ड पर उत्कीर्ण की गई थीं। वे स्वतन्त्र मूर्तियाँ नहीं, फ्रेम के भीतर उत्कीर्ण हैं। जनखत-शालभंजिका भी इसी कोटि की है।

एक बात और द्रष्टव्य है। साँची की शालभंजिकाएँ प्रायः वृक्ष के निचले भाग पर अथवा भूमि पर खड़ी अंकित की गई है जबकि मथुरा की उपरोक्त शालभंजिकाएँ प्रायः बौनी मानव आकृतियों पर और कभी-कभी पशु आकृतियों पर खड़ी आंकी गई हैं। जनखत से प्राप्त शालभंजिका भी मथुरा की शैली के ही समान मकर-मुख पर खड़ी उत्कीर्ण की गई है।

भरहुत और साँची की शालभंजिकाएँ जिस वृक्ष की डाल पकड़े हैं उसके तने का वे अपने हाथ-पैर से लपेटकर आलिंगन भी करती दिखाई गई हैं। परन्तु मथुरा की शालभंजिकाओं को वृक्ष का आलिंगन करते हुए नहीं अंकित किया गया है। इस दृष्टि से भी जनखत की शालभंजिका मथुरा शैली के निकट है क्योंकि यह भी वृक्ष के नीचे त्रिभंग मुद्रा में खड़ी है, उसका आलिंगन नहीं कर रही है। इस प्रकार वास्तुगत निर्माण शैली के आधार पर जनखत की तोरण-शालभंजिका मथुरा की शालभंजिकाओं के वर्ग में ही सम्मलित की जा सकती है। यों भी जनखत मथुरा के निकट है, इसलिए माधुरी कला का उस पर प्रभाव स्वाभाविक और तर्क संगत है। संभावना तो यह भी है कि यह तोरण-शालभंजिका अथवा सम्पूर्ण तोरण मथुरा-कलाक्षेत्र में ही निर्मित किया गया हो।

मथुरा की तोरण-शालभंजिकाओं के साथ यदि जनखत की तोरण-शालभंजिका का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो इसके संभावित निर्माणकाल पर प्रकाश पड़ सकता है। कंकाली टीले से प्राप्त और लखनऊ के राज्य-संग्रहालय में संग्रहीत शालभंजिकाएँ तथा कुछ वर्ष पूर्व सोंख के उत्खनन से जर्मन पुरातत्वविद् इर्बट इर्टेल को नाग-मन्दिर क्षेत्र से प्राप्त तोरण-शालभंजिका इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। जहाँ तक सोंख वाली शालभंजिका का प्रश्न है वह जनखत-शालभंजिका से अपने शारीरिक सौष्ठव तथा अलंकरण के कारण भिन्न है। सोंख-शालभंजिका का अंग-प्रत्यंग गोल, चिकना और सुडौल है। यौवन का लावण्य उसके अंग-अंग से झलक रहा है। उसके आभरणों में इल्कायन और फैशन का पुट है। उसके कानों में लम्बे लटकते कर्णाभरण, गले में एकावली, कमर पर मेखला, भुजाओं पर सपत्र

केयूर, कलाई में कंगन और पैरों में झांझर तथा कड़े पहन रखे हैं। उसकी शिरोभूषा में भी शीश पर पफ का अलंकरण है। जहाँ तक खड़े होने की मुद्रा का प्रश्न है, दोनों समान रूप से त्रिभंग मुद्रा में हैं। दोनों ने अपने दांये हाथ से वृक्ष की डाली पकड़ रक्खी है तथा दोनों ने शीश पर पफ और भुजाओं पर सपत्र केयूर धारण कर रक्खा है। पर, जनखत वाली शालभंजिका ने एकावली के अतिरिक्त एक चौड़ा और भारी हार भी पहना हुआ है। उसने अपने पफ को एक रिवन से बाँधा है जबकि यह रिबन सोंख-शालमंजिका के शीश पर नहीं है। जनखत की शालभंजिका ने पैरों में केवल झाँझर पहनी है, कड़े नहीं। एक अन्तर और है, सोंख-शालभंजिका का गुप्तांग स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया गया है जबकि जनखत-शालभंजिका ने उसे नीवीवन्ध से ढक रखा है। इस प्रकार अपनी मांसल गात्रयष्टि, चिकने और सुडौल अंग-प्रत्यंग तथा प्रदर्शित गुप्तांग के कारण सोंख-शालभंजिका मथुरा के भूतेश्वर-मन्दिर की कुषाण स्तम्भ-पुत्तलिकाओं की समकालीन जान पड़ती है। इसीलिए उसका संभावित निर्माणकाल प्रथम-द्वितीय शती ई० ठहराया जाता है। चूँकि जनखत-शालभंजिका उक्त दृष्टिकोण से अविकसित है, इसलिए उसका निर्माण सोंख-शालभंजिका के निर्माण से पहले हुआ माना जायगा।

जनखत और सोंख की शालभंजिकाएँ संभवतः अपनी पूर्वगामी उन तोरण-शालभंजिकाओं की परम्परा का द्योतन करती हैं, जिन्हें कंकाली टीले से पाया गया था। शारीरिक सौष्ठव, वेशभूषा तथा कला-शैली के आधार पर कंकाली टीले वाली शालभंजिकाएँ समान होते हुए भी भरहुत तथा साँची की शालभंजिकाओं के बीच रखी जा सकती हैं। कला, सौन्दर्य और विकास की दृष्टि से वे भरहुत-शालभंजिकाओं के बाद किन्तु साँची की शालभंजिकाओं से पहले निर्मित की गई जान पड़ती हैं। इसीलिए द्वितीय शती ई० पू० की भरहुत तथा प्रथम शती ई० पू०/ई० की साँची-शालभंजिकाओं के मध्य प्रथम शती ई० पू० में ही उन्हें रखा जाना चाहिए।

चौड़े भारी हार, भारी लटकते कर्णाभरण तथा ढके गुप्तांग के कारण जनखत की तोरण-शालमंजिका का निर्माण काल प्रथम शती ई०पू०/ई० में निर्धारित किया जा सकता है। द्वितीय शती ई० पू० तक नारी-गुप्तांग का खुला प्रदर्शन नहीं किया जाता था। भरहुत, मेहरौली तथा कंकाली टीले वाली किसी भी शालमंजिका में नारी-गुप्तांग का प्रदर्शन नहीं पाया गया है। गुप्तांग अंकित करने की परम्परा उत्तरी तथा मध्य भारत में प्रथम शती ई० पू० के अंतिम काल में प्रारम्भ हुई जान पड़ती है जैसा कि उस युग में निर्मित साँची तथा कुमराहार की शालभंजिकाओं से स्पष्ट हो जाता है। चूंकि जनखत-शालभंजिका का गुप्तांग भी प्रदर्शित नहीं है,

Janak Seva Ashram Jankh
Office
209736

इसलिए इसका निर्माण भरहुत, मेहरौली और कंकाली टीले की परम्परा पर ही साँची और कुमराहार की शालभंजिकाओं के निर्माण से पहले हुआ होगा।

जनखत-शालभंजिका का संभावित निर्माण काल उसके सपत्र केयूर से भी निर्धारित किया जा सकता है। सपत्र केयूर केवल मौर्य-शुंग काल में ही लोकप्रिय था, बाद में इसका रूप बदल गया था।[1] तीन पत्तियों के आकार वाला यह सपत्र केयूर अब तक भरहुत, भाजा, बोधगया, साँची और जगय्यपेट के उत्कीर्ण शिल्प में; बेसनगर, पवनी, पीतलखोरा, परखम, नोइ और मथुरा की यक्ष-मूर्तियों पर, बेग्राम के एक किन्नरी-पात्र पर तथा मथुरा, बसाढ़ और कौशाम्बी की मृण्मूर्तियों पर ही पाया गया है।[2] उपरोक्त सभी कलाकृतियाँ प्रथम शती ई० पू० की और उसके पहले की हैं। अपने सपत्र केयूर के कारण जनखत-शालभंजिका भी इसी कालावधि में निर्मित की गई होगी। इस सन्दर्भ में पूछा जा सकता है कि सोंख-शालभंजिका का भुजबन्ध भी सपत्र है, तो क्या वह भी जनखत-शालभंजिका की समकालीन ठहराई जा सकती है? उत्तर होगा—नहीं, क्योंकि पहली बात तो यह कि सोंख-शालभंजिका की खोज हर्टेल ने अर्द्धवृत्ताकार नाग-मन्दिर २ के कनिष्क स्तर से की है[3] तथा दूसरी बात यह कि कलागत उसके गुण, उसकी रूप-छवि उसे बाद का ठहराते हैं। हाँ, इतना स्वीकार किया जा सकता है कि दोनों के निर्माण के बीच का अन्तर कम होगा।

इस शालभंजिका के काल-निर्धारण में इसके तोरण-स्तम्भ पर उत्कीर्ण एक पद्म-पंक्ति का भी महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है। एक-दूसरे पर आवृत्त पद्म-चक्रों से बनी डिजाइन अब तक भरहुत, मथुरा, साँची, बोधगया, अमीन और अमरावती के उत्कीर्ण शिल्प में तथा बेग्राम के एक दन्त-फलक पर ही पाई गई है। ये सभी कलाकृतियाँ ५० ई०पू० से पहले की हैं।[4] इस आधार पर भी जनखत-

---

1. जे० ले० राय डेविडसन, 'बेग्राम आइवरीज एण्ड इण्डियन स्टोन्स', मार्ग, वाल्यूम २४, सं० ३ (जून १९७१), पृ० ३१-३२; 'बेग्राम आइवरीज एण्ड अर्ली इण्डियन स्कल्पचर', आस्पेक्ट ऑव इण्डियन आर्ट (सं० पी० पाल), लीडेन १९७२, पृ० १-१४।
2. इन सन्दर्भों के लिए लेखक का निबन्ध देखें 'ए ब्रैकेट शालभंजिका फ्रॉम जनखत नियर कन्नौज'।
3. हर्बट हर्टेल, 'सम रिजल्ट्स ऑव द एक्जकेवेशन्स ऐट सोंख', **जर्मन स्कॉलर्स ऑन इण्डिया,** वाल्यूम २, १९७६, पृ० ९८।
4. द्रष्टव्य डेविडसन का उपरोक्त लेख, मार्ग, पृ० ३१-३२।

Janak Seva Ashram Jankhat Kannauj-209736 ★ Office

शालभंजिका को प्रथम शती ई० पू० के अन्तिम काल का अथवा प्रथम शती ई० के प्रारम्भिक काल का माना जा सकता है।

जनखत-शालभंजिका के इस काल-निर्धारण में केवल एक तथ्य आड़े आता है, और वह है इसकी शिरोभूषा का पफ। पफ का प्रयोग प्रायः कुषाणकालीन माना जाता है और इसे उस युग की मथुरा की स्तम्भ-पुत्तलिकाओं की शिरोभूषा में देखा जा सकता है। किन्तु लम्बे कोट, ऊँचे बूट और नुकीली टोपी के समान हो सकता है। शिरोभूषा में पफ का फैशन भी भारत में शकों के माध्यम से आया हो और कुषाणकाल में लोकप्रिय हुआ हो। कोई भी नया फैशन पूर्णरूप से न तो रातों-रात आता है और न,ही सर्वत्र एक साथ प्रचलित होता है। सम्भव है, प्रस्तुत जनखत-शालभंजिका उस काल में तराशी गई हो जब समाज में कतिपय नये फैशन तो प्रचलन में आ गए हों पर पुराने अभी चलन से बाहर न हुए हों। इस धारणा को इस तथ्य से ठोस आधार प्राप्त होगा कि जनखत-शालभंजिका का निर्माण उस संधिकाल में हुआ होगा जब प्रथम शती ई० पू० समाप्त प्रायः होगी अथवा प्रथम शती ई० का उषाकाल होगा। यही काल शक-कुषाण संस्कृति का प्रवेशकाल है।

प्रस्तुत शालभंजिका के निर्माणकाल पर दूसरे तोरण-स्तम्भ के भीतरी भाग पर उत्कीर्ण वीरसेन का एक खण्डित अभिलेख भी यत्किंचित प्रकाश डाल सकता है। इस अभिलेख के ऊपर दो उल्टे नन्द्यावर्त या नन्दिपदों के बीच में एक षट्दल कमल है।[1] चूँकि वीरसेन को एक नागवंशी राजा माना जाता है और नागवंशी राजचिह्नों में ताड़वृक्ष का महत्त्वपूर्ण स्थान है[2], इसलिए इस षट्दल कमल को विद्वान् ताड़वृक्ष के रूप में पहचानते हैं; यद्यपि इसे श्रीवत्स प्रतीक का एक रूप भी स्वीकार किया जा सकता है। श्रीवत्स तथा स्वस्तिक प्रतीक मथुरा-नरेश सोडास के अभिलेखों में अंकित पाये गये हैं, जिनका काल प्रथम शती ई० पू० है।[3] यदि अभिलेखों में प्रतीकों के अंकन की परम्परा को आधार माना जाय तो भी जनखत का स्तम्भ-अभिलेख लगभग उसी काल के सन्निकट रखा जा सकता है।

---

1. प्रतीक-चित्र के लिए देखें लेखक का निबन्ध 'यूज ऑव ऑस्पिशस, मोटियस इन इण्डियन एपीग्राफ्स' बुलेटिन ऑव द आसाम स्टेट म्यूजियम, सं० ५, १९८५, चित्र २१ ब।
2. मोहनलाल शर्मा, पद्मावती, भोपाल १९७१, पृ० २६ तथा ५८।
3. 'दिनेशचन्द्र सरकार, सेलेक्ट इन्स्क्रिप्शन्स, कलकत्ता १९४२, बुक २, सं० २५, फलक २६।

सात पंक्तियों वाले जनखत-अभिलेख की केवल ऊपर की तीन पंक्तियाँ ही पढ़ी जा सकती हैं। ब्राह्मी अक्षरों में यह अभिलेख इस प्रकार है—

प्रथम पंक्ति —स्वामिस वीरसेनस
द्वितीय पंक्ति —संवत्सरे १०+३ ग्रीष्म
तृतीय पंक्ति —पखे ४ दिवसे प
चतुर्थ पंक्ति —धमि थे······ग काय
पंचम पंक्ति —य················त त
षष्ठम् पंक्ति —य················न य
सप्तम् पंक्ति —······················

अधिकांश अभिलेख नष्ट होने के कारण इसमें अंकित विषय-वस्तु का ज्ञान दुर्लभ है। हाँ, राजा वीरसेन के १३ वें राज्यवर्ष में ग्रीष्म ऋतु के चतुर्थ पक्ष का उल्लेख अवशिष्ट है। अभिलेख के संवत्सर की पहचान या तो विक्रम संवत् (५७ ई० पू०) से अथवा शक संवत् (७८ ई०) से की जा सकती है। विक्रम संवत् से इस अभिलेख की तिथि ४४ ई० पू० और शक संवत् से ९१ ई० निकलती है। इस प्रकार अभिलेख के आधार पर भी शालभंजिका समेत तोरण-खण्ड को या तो प्रथम शती ई० पू० का अथवा प्रथम शती ई० का ठहराया जा सकता है। स्पष्ट है कि जनखत की तोरण-शालभंजिका का निर्माणकाल प्रथम शती ई० के बाद का नहीं ठहराया जा सकता है। यों, इस संभावना की भी नितांत उपेक्षा नहीं की जा सकती है कि तोरण पहले स्थापित किया गया हो और अभिलेख कालान्तर में उत्कीर्ण किया गया हो जैसा कि हम जानते हैं कि साँची के विशाल स्तूप की तल-वेदिका पर प्रथम शती ई० से लेकर सातवीं शती ई० तक अभिलेख अंकित किए जाते रहे थे। इस दृष्टि से जनखत-शालभंजिका का अंकन प्रथम शती ई० पू० में हुआ मान लेना निरा असंगत नहीं कहा जाना चाहिए।

मेरे गुरुतुल्य पर विद्वान् एवं कला-मर्मज्ञ श्री कृष्णदेव ने जनखत के इस अभिलेख को पूर्व प्रकाशित बतलाया है।[1] हो सकता है वे सही हों, पर जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ वीरसेन का जो अभिलेख रिचर्ड बर्न ने खोजा था और जिसे एफ० ई० पारिजिटर ने इपीग्रैफिया इण्डिका के ११ वें वाल्यूम (पृ० ८५-८७) में प्रकाशित किया था वह पत्थर की बनी हुई एक पशुमूर्ति के सिर और मुँह पर

---

[1] कृष्णदेव, 'नोट ऑन द ब्रैकेट शालभंजिका फ्राम जनखत', **जर्नल ऑव द इण्डियन सोसाइटी ऑव ओरियण्टल आर्ट**, वाल्यूम १२-१३ (१९८१-८३), पृष्ठ ९६।

खुदा हुआ था ।[1] मेरे द्वारा प्रस्तुत अभिलेख संभवतः दूसरा है। वीरसेन का एक अन्य अभिलेख उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले में स्थित मझिलगाँ नामक ग्राम में मिला है। ब्राह्मी अक्षरों में तीन पंक्तियों वाला यह अभिलेख एकमुखलिंग पर उत्कीर्ण है। इसमें वीरसेन के साथ 'नाग' शब्द भी पढ़ा गया है। इस अभिलेख के ऊपर भी जनखत-अभिलेख जैसे प्रतीक उत्कीर्ण वताये जाते हैं ।[2]

वीरसेन के कई सिक्के भी मथुरा, पद्मावती और कान्तिपुरी से प्राप्त हुए हैं। उसके इन चौकोर ताँबे के सिक्कों के अग्र भाग पर ऊपर ब्राह्मी अक्षरों में 'वीरसेनस' तथा नीचे दो नंदिपदों के वीच एक षट्दल कमल अथवा ताड़वृक्ष की वैसी ही डिज़ाइन मिलती है जैसी उसके अभिलेखों में पाई गई है ।[3] इससे यह स्पष्ट है कि इन सिक्कों और अभिलेखों में उल्लिखित वीरसेन एक ही व्यक्ति है और इसीलिए उसके सिक्के और अभिलेख समकालीन होने चाहिए। कम से कम उसके कुछ सिक्कों पर उसका ३४ वाँ राज्यवर्ष अंकित मिलता है ।[4] इन तथ्यों के प्रकाश में वीरसेन एक प्रतापी नाग-शासक जान पड़ता है जिसका राज्य अथवा प्रभाव क्षेत्र पद्मावती, मथुरा और फ़तेहपुर तक सुविस्तृत था तथा जिसने कम से कम ३४ वर्ष तक सुदीर्घ शासन किया था।

शिलालेख के आधार पर वीरसेन का समय हुविष्क और वासुदेव के वीच माना गया है ।[5] परन्तु उसके सिक्कों के आधार पर विद्वान् उसे प्रथम शती ई० पू० में ठहराते हैं। ब्रिटिश संग्रहालय में संग्रहीत नागवंशी राजा शेषदात, रामदात और शिशुचन्द्रदात के सिक्कों को काशीप्रसाद जायसवाल ने प्रथम शती ई० पू० का माना है। चूँकि वीरसेन के सिक्कों और उक्त तीनों राजाओं के सिक्कों में समानता है, इसलिए वीरसेन को भी प्रथम शती ई० पू० में रक्खा जाना चाहिए। वीरसेन के चौकोर ताँबे के सिक्के स्मिथ, रैप्सन, कनिंघम तथा एलन ने प्रकाशित किये हैं। कनिंघय ने मथुरा-क्षेत्र से वीरसेन के १०० तथा कार्यालय ने बुलन्दशहर

---

1. मोहनलाल शर्मा, उपरोक्त, पृ० १३।
2. देवप्रकाश शर्मा, 'हिस्टॉरिकल ट्रेज़र्स ऐट फतेहपुर', नार्दर्न इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद, २०-२-१९८३; पुरातत्त्व (जर्नल ऑव द आर्कियोलॉजिकल सोसाइटी ऑव इण्डिया), सं० ११।
3. द्रष्टव्य, परमेश्वरीलाल गुप्त, 'क्वाइन्स ऑव वीरसेन', **न्यूमिस्मेटिक डायजेस्ट**, वाल्यूम ५, भाग २, १९८१, पृ० ४५।
4. मोहनलाल शर्मा, उपरोक्त, पृ० २६।
5. वही, पृ० १३-१४।

Janak Seva Ashram J...khat Kannauj-209736
Office

जिले के इन्दौरखेड़ा नामक स्थान से एक दर्जन सिक्के प्राप्त किये थे। रिन्दं ने को कन्नौज, संकिसा तथा एटा जिले के सराय अगहत नामक स्थान से भी वीरसेन के सिक्के मिले थे। परमेश्वरीलाल गुप्त ने मथुरा-संग्रहालय के वीरसेन के सिक्कों का अध्ययन किया है। इन सिक्कों के पृष्ठ भाग पर मित्र तथा दत्त राजाओं के सिक्कों जैसी नारी-मूर्ति, इनकी चौकोर आकृति, राजा के विरुद का अभाव तथा नंदिपद प्रतीक के अंकन के आधार पर परमेश्वरीलाल गुप्त ने इन सिक्कों को ईसवी संवत् से पहले का स्वीकार किया है।[1]

इन सभी साक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में जनखत-शालभंजिका का निर्माण या तो प्रथम शती ई० पू० के अन्तिम दिनों में अथवा प्रथम शती ई० के प्रारम्भ में हुआ जान पड़ता है। अब तक प्राप्त मुख्य शालभंजिका-मूर्तियों के तुलनात्मक अध्ययन से भी यही निष्कर्ष सही जान पड़ता है। विकास-क्रम के आधार पर प्रमुख उपलब्ध शालभंजिकाओं का निर्माण-कालक्रम इस प्रकार समझा जाना चाहिये—

भरहुत की स्तम्भ-शालभंजिकाएँ	द्वितीय शती ई० पू०
कंकाली टीला की तोरण-शालभंजिकाएँ	प्रथम शती ई० पू०
साँची की तोरण-शालभंजिकाएँ	प्रथम शती ई० पू०
जनखत की तोरण-शालभंजिका	प्रथम शती ई० पू०/ई०
सोंख की तोरण-शालभंजिका	प्रथम-द्वितीय शती ई०
भूतेश्वर मन्दिर की स्तम्भ-पुत्तलिकाएँ	द्वितीय शती ई० पू०

चित्र-परिचय

१. जनखत की तोरण-शाल-भंजिका
२-३. भरहुत की स्तम्भ-शालभंजिकाएँ
४-५. कंकाली टीले की तोरण-शालभंजिकाएँ
६. बोध गया की स्तम्भ-शालभंजिकाएँ
७-८ साँची की तोरण-शालभंजिकाएँ
९. कुमराहार की स्तम्भ-शालभंजिका
१०. सोंख की तोरण-शालभंजिका
११-१६. भूतेश्वर मन्दिर (मथुरा) की स्तम्भ-पुत्तलिकाएँ

---

[1] परमेश्वरीलाल गुप्त, उपरोक्त, पृ० ४५।

फलक सं० २

जनखत की तोरण शालभंजिका

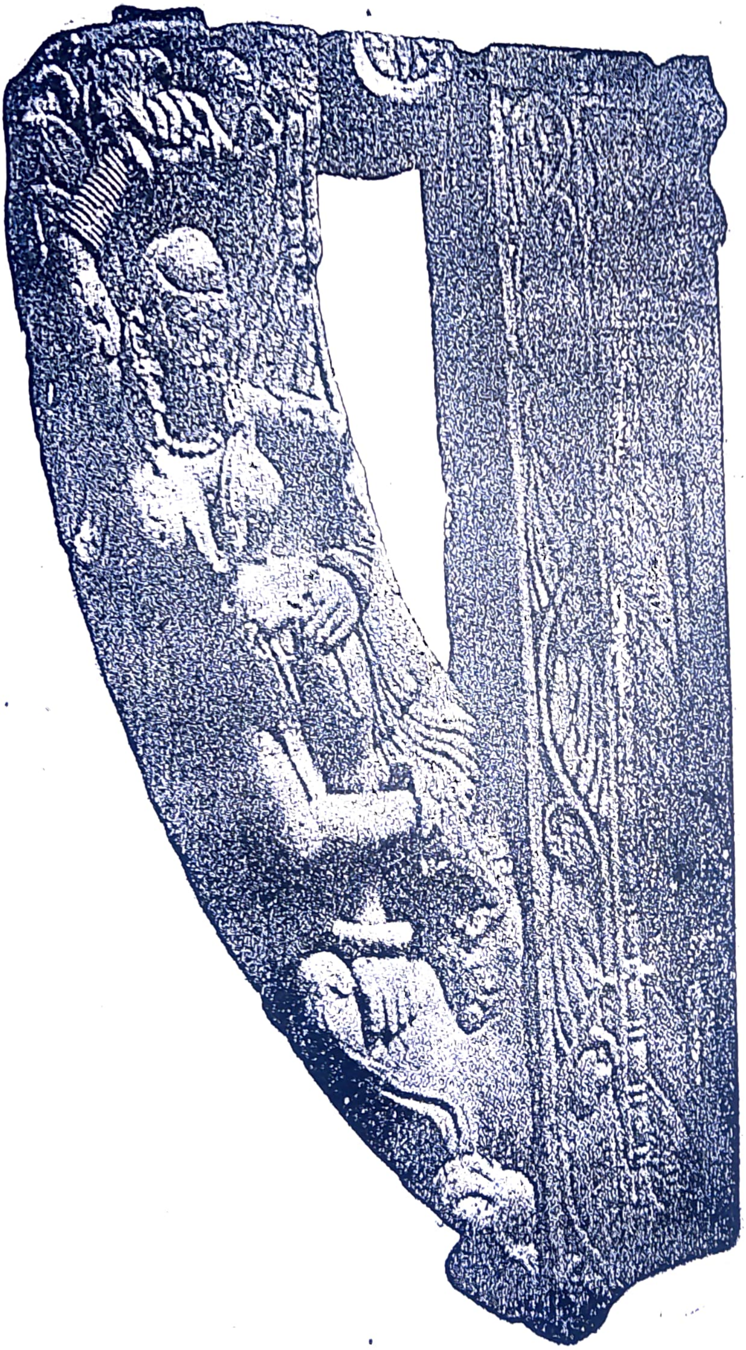

(चित्र सं० १)

Janak Seva Ashram khat Kannauj-2
Office